''अपने नाम की महिमा कर''

(12:9–50)

तीन वृक्षों की एक अद्‌भुत प्राचीन लोककथा कई भाषाओं में मिलती है। तीन पेड़ एक पहाड़ की चोटी पर एक साथ बड़े हो रहे थे और उन्होंने स्वप्न देखा कि बड़े होकर क्या बनेंगे। पहले वृक्ष ने हीरों और मोतियों का स्वप्न देखा और किसी दिन बहुमूल्य मोतियों का भण्डार अपने अंदर रखने की इच्छा जताई। दूसरे वृक्ष ने भ्रमण और उत्तेजना का स्वप्न देखा और एक दिन गहरे समुद्र के पार राजाओं को ले जाने वाला बहुत बड़ा समुद्री जहाज बनने की इच्छा जताई। तीसरे वृक्ष का मन पहाड़ की चोटी को छोड़कर कहीं दूसरी जगह जाने का नहीं था। इसके बजाय, उसकी महत्वाकांक्षा सीधे तनकर वहीं लोगों को परमेश्वर की ओर खींचने के लिए खड़ा रहने की थी।

काफी समय बीतने पर जब ये वृक्ष काफी बड़े और मजबूत हो गए तो एक दिन उस पहाड़ की चोटी पर तीन लकड़हारे, पेड़ों को काटने के लिए आए। एक लकड़हारे ने पहले वृक्ष के पास आकर कहा, ''यही पेड़ मुझे चाहिए था,'' और उसने इसे काट दिया। दूसरे लकड़हारे ने दूसरे पेड़ के पास पहले वाले की ही बात दोहराई, और उसे काट डाला। तीसरे लकड़हारे ने बचे हुए वृक्ष को बेरहमी से काटने से पहले बुड़बुड़ाकर कहा कि उसके उद्देश्य को तो कोई भी पुराना वृक्ष पूरा कर देगा।

जब पहले वृक्ष को काटकर उसका एक बक्सा बनाया गया, तो उसे लगा कि अपने अन्दर हीरे–मोतियों का भंडार रखने का उसका स्वप्न पूरा हो रहा है। पर शीघ्र ही उसे समझ आ गई कि यह तो बहुत ही साधारण किस्म का जानवरों के चारे के लिए रखा गया बक्सा था। दूसरे वृक्ष ने एक बड़े समुद्री जहाज की अपनी आशा को मिट्टी में मिलते देखा जब उसे पता चला कि उसकी तो एक छोटी सी किश्ती बनाई गई थी जो केवल झील में ही तैर सकती थी। तीसरे वृक्ष को सबसे बुरा अनुभव हुआ। इसे काटकर दूसरे शहतीरों के ढेर में फैंककर भुला दिया गया।

समय बीतने पर इन तीनों पेड़ों को अलग–अलग अनुभव हुए। जिस वृक्ष का बक्सा बनाया गया था, उसका इस्तेमाल एक रात एक युवा देहाती दम्पत्ति द्वारा किया गया था

जिन्होंने एक बालक को जन्म दिया था, पर उन्हें सराय में रहने के लिए कोई जगह न मिल पाई थी। उन्होंने बक्से में ताज़ा पुआल रखा और इसे एक खटोले के रूप में इस्तेमाल किया। नवजात बालक के चरनी में पड़े होने पर, पेड़ को समझ आ गई कि उसने संसार का सबसे बड़ा खज़ाना अपने अन्दर रखा हुआ था। किश्ती बन चुका पेड़ एक रात झील में आए तूफान में से लोगों के एक झुंड को निकालने की कोशिश कर रहा था। डूबने और सभी सवार लोगों के मारे जाने के भय से, किश्ती को आश्चर्य हुआ जब सो रहा एक यात्री जागकर तूफान से कहने लगा, "शांत! थम जा!" जब तूफान एकदम शांत हो गया, तो उस वृक्ष को समझ आया कि वह तो राजाओं के राजा को ले जा रहा था। तीसरे पेड़ को एक दिन लकड़ियों के ढेर में से निकालकर लहूलुहान आदमी की पीठ पर रख दिया गया जिसे उसकी मृत्यु के लिए शोर मचाने वाली एक घृणित भीड़ के बीच में से गलियों में घुमाया जा रहा था। नगर से बाहर ले जाकर, उस आदमी को पेड़ पर कीलें ठोककर मरने के लिए ऊपर चढ़ा दिया गया। यह सब होते देखकर तीसरा पेड़ दुखी हुआ, क्योंकि वह इस आदमी के साथ इससे अधिक बुराई की कल्पना नहीं कर सकता था। इसकी यही इच्छा थी कि लोगों को परमेश्वर की ओर खींचे। तीन दिन बाद, दुनिया ही बदल गई क्योंकि वह आदमी मुर्दों में से जी उठा और तीसरे पेड़ को पता चला कि उसके बाद जब भी लोग उसकी ओर देखेंगे, तो उनका ध्यान परमेश्वर की ओर ही जाएगा! अलग-अलग आशाओं और स्वप्नों वाले तीनों पेड़ परमेश्वर की महिमा का कारण बन गए।

जैसे कि हम पहले ही देख चुके हैं, यूहन्ना रचित सुसमाचार में "महिमा" एक महत्वपूर्ण विषय है। सुसमाचार की इस पुस्तक में हमने पहले यह शब्द देखा था, जहां यूहन्ना ने लिखा है, "और वचन देहधारी हुआ; और अनुग्रह और सच्चाई से परिपूर्ण होकर हमारे बीच में डेरा किया, और हम ने उस की ऐसी महिमा देखी, जैसी पिता के एकलौते की महिमा" (1:14)। यूहन्ना की पुस्तक में क्रिया रूप "महिमा कर" तेईस बार और संज्ञा रूप "महिमा" अठारह बार मिलता है। स्पष्टतः यीशु के जीवन के बारे में लिखते हुए यूहन्ना महिमा की ओर विशेष ध्यान देता है!

परमेश्वर की महिमा और यीशु

इस अध्याय के शुरू में ही, हम यरूशलेम को फसह के पर्व की उत्तेजना और लोगों की भीड़ द्वारा यीशु के आने का पूर्वानुमान लगाते हुए देखते हैं। वह कैसे आएगा? वह क्या करेगा? क्या अब आकर वह यह घोषणा करेगा कि वह वही चिर प्रतीक्षित मसीहा है जो इस्राएल का राजा बनेगा? हर तरफ यीशु की ही बातें हो रही थीं।

जब यरूशलेम में यीशु के प्रवेश का समय आया, तो बहुत बड़ी भीड़ नगर में उसके स्वागत के लिए उससे मिलने आई। खजूर की डालियों को हिलाते और "होशन्ना, धन्य इस्राएल का राजा, जो प्रभु के नाम से आता है" (12:13) पुकारते हुए, उन्होंने एक राजा के रूप में यीशु का स्वागत किया। जकर्याह 9:9 की भविष्यवाणी को पूरा करते हुए, यीशु गधे पर बैठकर यरूशलेम में आया। यूहन्ना ने लिखा है कि यीशु के चेले इस सारे दृश्य से

उलझन में पड़ गए थे और उन्हें इन घटनाओं की समझ तभी आई "जब यीशु की महिमा प्रकट हुई" (12:16)। हम फिर देखते हैं कि महिमा यीशु के जीवन के प्रत्येक पहलू में झलकती थी परन्तु क्रूस के समय यह सबसे अधिक थी। संसार तो महिमा को शक्ति, प्रसिद्धि और धन से जोड़ता है, पर परमेश्वर की महिमा प्रेम, दीनता, क्रूस पर बलिदान में सबसे अधिक और स्पष्ट दिखाई देती है।

फिर कुछ यूनानियों[1] ने फिलिप्पुस से कहा, "श्रीमान हम यीशु से भेंट करना चाहते हैं" (12:21)। फिलिप्पुस अंद्रियास के पास गया, और उन्होंने जाकर यीशु को बताया कि यूनानियों ने क्या कहा है। यीशु ने उत्तर दिया, "वह समय आ गया है, कि मनुष्य के पुत्र की महिमा हो" (यूहन्ना 12:23)। फिर यहां, "महिमा" का उल्लेख क्रूस के हवाले से किया गया है। अगली आयतों में यह स्पष्ट हो जाता है, जहां यीशु ने समझाया कि किस प्रकार गेहूं के दाने को फल देने के लिए मरकर भूमि में गाड़ा जाना आवश्यक है। क्रूस पर अपने चढ़ाए जाने की बात करते हुए यीशु ने अपने चलों से समर्पण और बलिदान के अपने उदाहरण का अनुसरण करने के लिए कहा। उसने संकेत दिया कि यदि वे ऐसा करें तो इससे वे पिता की महिमा करेंगे।

अगली आयतों की बातचीत आयत 28 से यीशु की प्रार्थना बन जाती है: "हे पिता, अपने नाम की महिमा कर।" इस पर, स्वर्ग से आवाज़ आई "मैं ने उसकी महिमा की है, और फिर भी करूंगा" (12:28)। भीड़ में से कुछ लोगों को लगा कि उन्होंने बादल के गरजने की आवाज सुनी है। औरों ने यह दावा किया कि उन्हें एक स्वर्गदूत का स्वर सुनाई दिया है। यीशु ने उन्हें बताया कि उन्होंने एक आवाज सुनी थी जिसने उनके कारण ही उसके साथ बात की थी अर्थात सचमुच पिता ने ही बात की थी। पुन: उसने जिस महिमा की बात की थी, वह मुख्यत: एक क्रूस ही था। यीशु ने हर काम और बात से पिता की महिमा की थी, परन्तु सबसे बड़ी कहानी का उस समय पता चलना था जब यीशु ने क्रूस पर चढ़ना था और मुर्दों में से जी उठना था। "और मैं यदि पृथ्वी पर से ऊंचे पर चढ़ाया जाऊंगा, तो सब को अपने पास खींचूंगा" (12:32) कहकर यीशु ने स्पष्ट किया कि वह क्रूस की ही बात कर रहा था। यूहन्ना ने टिप्पणी की कि, "ऐसा कहकर उस ने यह प्रगट कर दिया, कि वह कैसी मृत्यु से मरेगा" (12:33)।

फिर लोगों ने यीशु को बताया कि उन्होंने "व्यवस्था की यह बात सुनी" थी (12:34)। सैकड़ों साल पहले इस्राएल ने सीनै पर्वत पर अपने कानों से परमेश्वर का स्वर सुना था।[2] गरज, बिजली की चमक, तुरही की आवाज, और धुएं में, इस्राएल ने परमेश्वर की महिमा का थोड़ा सा अंश देखा था। अब, इतने वर्षों बाद, वे यीशु को देख व सुनकर परमेश्वर की महिमा का उससे भी अधिक भाग देख रहे थे। उन्हें यह अहसास नहीं हुआ कि जल्द ही क्रूस पर चढ़ाए जाकर और मुर्दों में से जी उठकर, यीशु ने पहले से भी अधिक महिमा प्रकट करनी थी!

यरूशलेम में प्रवेश करने पर राजा की तरह स्वागत होने और इस अध्याय में लिखित बातें कहने के बाद, यीशु भीड़ से निकलकर छिप गया। यीशु को उनके साथ सच्ची बात

करने और चिह्नों द्वारा अपनी पहचान और सामर्थ प्रकट करने के कारण लोगों में पैदा हुए अविश्वास से दुख हुआ। यूहन्ना ने लोगों के विश्वास में वैसी ही कमी देखी जिसकी भविष्यवाणी यशायाह ने की थी: "जो समाचार हमें दिया गया, उसका किस ने विश्वास किया? और यहोवा का भुजबल किस पर प्रगट हुआ?" (यशायाह 53:1); *"तू इन लोगों के मन को मोटे और उनके कानों को भारी कर, और उनकी आंखों को बन्द कर; ऐसा न हो कि वे आंखों से देखें, और कानों से सुनें, और मन से बूझें, और मन फिरावें और चंगे हो जाएं"* (यशायाह 6:10)। यूहन्ना ने लिखा कि "यशायाह ने ये बातें इसलिए कहीं, कि उसने उसकी महिमा देखी; और उस ने उसके विषय में बातें की" (12:41)। यहां इस अध्याय में चौथी बार "महिमा" शब्द का इस्तेमाल मसीह की मृत्यु, गाड़े जाने और जी उठने के लिए हुआ है।

परमेश्वर की महिमा और हम

अपने और परमेश्वर की महिमा के कार्य में यीशु की बातें सुनकर, हमें एक स्पष्ट और प्रत्यक्ष संदेश मिलता है और वह संदेश यह है कि "महिमा" का यह विषय हमारे जीवनों को कैसे प्रभावित करता है। यीशु ने अपने चेलों को बताया कि "वह समय आ गया है कि मनुष्य के पुत्र की महिमा हो" (12:23)। उसने अपनी मृत्यु की अनिवार्यता समझाई (12:24) और फिर कहा:

> जो अपने प्राण को प्रिय जानता है वह उसे खो देता है; और जो इस जगत में अपने प्राण को अप्रिय जानता है; वह अनन्त जीवन के लिए उस की रक्षा करेगा। यदि कोई मेरी सेवा करे, तो मेरे पीछे हो ले; और जहां मैं हूं, वहां मेरा सेवक भी होगा; यदि कोई मेरी सेवा करे, तो पिता उसका आदर करेगा (यूहन्ना 12:25, 26)।

इस भाग में विचार का प्रवाह कुछ ऐसे है कि मसीह को महिमा मिलने ही वाली थी। परन्तु किसी की उम्मीद के विपरीत कि उसका अर्थ यह हो सकता है, उसके लिए महिमा पाने के लिए मरना आवश्यक था। उसी प्रकार, यीशु के अनुयायियों को तभी अनन्त जीवन मिलता और वे परमेश्वर की महिमा करते हैं जब वे अपने घमण्ड, स्वार्थ और इस संसार के लिए प्रेम से परमेश्वर की आज्ञा मानने के लिए "मर" जाते हैं।

जो कुछ यीशु ने 12:25, 26 में अपने चेलों को करने के लिए कहा और जो बाद में इस अध्याय में गुप्त चेलों ने किया, उनमें एक चौंकाने वाली समानता मिलती है:

> तौभी सरदारों में से भी बहुतों ने उस पर विश्वास किया, परन्तु फरीसियों के कारण प्रगट में नहीं मानते थे, ऐसा न हो कि आराधनालय में से निकाले जाएं। क्योंकि मनुष्यों की प्रशंसा उन को परमेश्वर की प्रशंसा से अधिक प्रिय लगती थी (12:42, 43)।

आयत 43 में दो बार अनुवादित शब्द "प्रशंसा" यूनानी शब्द *doxa* से लिया गया है। यह

वही शब्द है जिसका अनुवाद इस पाठ में ''महिमा'' किया गया है। यूहन्ना ने संकेत दिया कि डरपोक चेलों ने अपने विश्वास को गुप्त रखा क्योंकि ''मनुष्यों की प्रशंसा उनको परमेश्वर की प्रशंसा से अधिक प्रिय लगती थी।'' लोगों की महिमा घमण्ड, शक्ति, आत्म-रक्षा और आत्म-विकास में देखी जाती है, परन्तु परमेश्वर की महिमा दीनता, बलिदान और अपना इन्कार करने में देखी जाती है।

बाद में सुसमाचार की अपनी पुस्तक में, यूहन्ना ने एक असाधारण भविष्यवाणी लिखी जो यीशु ने पतरस के विषय में की थी:

> मैं तुझ से सच सच कहता हूं, जब तू जवान था, तो अपनी कमर बान्धकर जहां चाहता था, वहां फिरता था; परन्तु अब तू बूढ़ा होगा, तो अपने हाथ लम्बे करेगा, और दूसरा तेरी कमर बांधकर जहां तू न चाहेगा वहां तुझे ले जाएगा (यूहन्ना 21:18)।

यूहन्ना ने इसे विस्तार से बताया, ''उसने इन बातों से पता दिया कि पतरस कैसी मृत्यु से परमेश्वर की महिमा करेगा'' (21:19)। फिर हमें सुसमाचार की इस पुस्तक की शिक्षाओं में महिमा और बलिदान दोनों को मिलाने का पता चलता है।

मसीही लोगों का जीवन परमेश्वर की महिमा के लिए होना चाहिए। हमारी हर बात से परमेश्वर की महिमा होनी चाहिए (1 कुरिन्थियों 10:31)। सदियों से, बहुत से लोग अपने नाम पर बड़े-बड़े मन्दिर या साम्राज्य बनाकर परमेश्वर को महिमा देने की कोशिश करते रहे हैं। यूहन्ना रचित सुसमाचार में, यीशु ने बार-बार बताया कि परमेश्वर की महिमा सीधे-सादे और दीन कार्यों में देखी जाती है। परमेश्वर की महिमा आज प्रेम के उन बलिदानपूर्वक कार्यों में देखी जाती है जो शायद संसार को नज़र न आते हों:

> मां द्वारा अपने बच्चे की स्नेहपूर्वक संभाल में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है।
>
> बूढ़े माता-पिता या पड़ोसी को सम्भालने में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है।
>
> किसी दुखी व्यक्ति की बात की ओर ध्यान देने और उसे सांत्वना देने में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है।
>
> अपने जीवन साथी के प्रति वफादार होने में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है।
>
> किसी ज़रूरतमंद की सहायता करने में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है।

स्कूल में मेरे शिक्षक एक दिन महान प्रचारकों के बारे में बता रहे थे। उन्होंने कहा, ''आज सबसे अधिक प्रचार वे लोग करते हैं जिनके बारे में आपने कभी नहीं सुना।'' मेरा

मानना है कि उनकी यह जबर्दस्त टिप्पणी यूहन्ना 12 में यीशु की शिक्षा की तरह ही थी!

विक्टर डेले नामक ऑस्ट्रेलियाई कवि के जीवन के अंतिम दिनों में अस्पताल में प्यार से देखभाल की गई थी। मृत्यु से पहले उसने जो बात की वह नर्सों का उनकी दया के लिए धन्यवाद करना था। नर्सों का जवाब था, ''हमारा धन्यवाद करने की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर के अनुग्रह का धन्यवाद करो।'' डेले का उत्तर था, ''पर क्या *आप* परमेश्वर का अनुग्रह नहीं हैं?'' मेरा मानना है कि वह सही था। उसी प्रकार, आपने और मैंने परमेश्वर की महिमा देखी और पाई है, और अब हमें उसकी महिमा *बनना* है। दीनता से बलिदानपूर्वक सेवा करके हमें अपने संसार में परमेश्वर की दृश्यमान महिमा बनना चाहिए।

सारांश

तीनों पेड़ों के परमेश्वर के लिए कुछ करने के बहुत बड़े स्वप्न थे। विडम्बना यह है कि यह काम वे केवल कटने के बाद ही कर पाए, जब उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया और लगा कि वे परमेश्वर की महिमा के लिए काम नहीं आ सकेंगे। यीशु ने दावा किया कि उसका जीवन ऐसा ही था और हमारा भी! आइए हर रोज हम एक छोटी सी प्रार्थना करें ''हे प्रभु, आज हमारे जीवनों से, तेरी महिमा हो।''

पाद टिप्पणियां

[1]ये सम्भवत: ''परमेश्वर का भय रखने वाले'' वे लोग थे जो यहूदी मत की शिक्षाओं से आकर्षित हुए थे, परन्तु खतना करवाने और पूरी तरह से यहूदी मत में परिवर्तित होने को तैयार नहीं थे। इसलिए, वे अन्यजाति ही रहे और यरूशलेम में मन्दिर में आराधना के लिए आने पर अन्यजातियों के आंगन में ही प्रवेश कर पाए थे। फिर, इन पंक्तियों में ''यूनानियों'' का अर्थ सम्भवत: यूनानियों के देश से आने वाले लोगों की अपेक्षा ''परमेश्वर का भय रखने वाले'' हो सकता है। [2]निर्गमन 20; व्यवस्थाविवरण 5:22.